न्यायमूर्ति एम. एम. पुंछी के समक्ष

अमर नाथ और अन्य-याचिकाकर्ता

बनाम

झंडू लाल और अन्य-प्रतिवादी

सिविल पुनरीक्षण क्रमांक 2926/1981

5 मई 1982

विभाजन अधिनियम (1893 का IV) - धारा 2, 3, 4 और 8 - सिविल प्रक्रिया संहिता (1908 का V) - धारा 2 (डी) और 115 - अचल संपत्ति के विभाजन के लिए मुकदमा - संपत्ति को विभाज्य नहीं माना जाता है और नीलामी की जाती है आदेश दिया गया - विभाजन अधिनियम की धारा 2 और 3 की आवश्यकताओं का अनुपालन नहीं किया गया - नीलामी का निर्देश देने वाला ऐसा आदेश - क्या डिक्री माना जा सकता है और धारा 8 के तहत अपील की जा सकती है - संहिता की धारा 115 के तहत संशोधन - क्या सक्षम है - धारा 2 और 3 -गुंजाइष।

यह अभिनिर्णीत किया गया कि विभाजन अधिनियम 1893 की धारा 2 और 3 स्याम-जुड़वाँ हैं और अटूट रूप से जुड़ी हुई हैं। धारा 2 के तहत प्रस्तुत अनुरोध व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से एक अंश या उससे अधिक की सीमा तक रुचि रखने वाले एक या अधिक शेयर धारकों द्वारा भी किया जा सकता है। ऐसा नहीं है कि जब अनुरोध किया जाता है तो अदालत उसे स्वीकार कर सकती है। यह केवल धारा 3 का उपयोग करके ही ऐसा कर सकता है जो इसकी शक्तियों पर प्रतिबंध लगाता है और अन्य शेयरधारकों के लिए उम्मीदें बढ़ाता है। इस प्रकार, धारा

2 के तहत एक अनुरोध को अन्य शेयरधारकों को यह अधिकार देना चाहिए कि वे बिक्री की मांग करने वाली पार्टी या पार्टियों के शेयर या शेयरों को मूल्यांकन पर खरीदने के लिए आवेदन कर सकें। तब न्यायालय को अनिवार्य रूप से शेयर या शेयरों के मूल्यांकन का आदेश उस तरीके से देना होगा जो वह उचित समझे और ऐसे शेयरधारक को निर्धारित कीमत पर बेचने की पेशकश करे और इस संबंध में सभी आवश्यक और उचित निर्देश दे सकता है। भले ही धारा 2 में परिकल्पित शर्तें मौजूद हों, न्यायालय के पास संपत्ति की बिक्री और आय के वितरण का निर्देश देने या न देने का विवेकाधिकार है। जहां कुछ सह-हिस्सेदारों ने अकेले अदालत से मौखिक अनुरोध किया और धारा 3 की आवश्यकता के प्रयोजनों के लिए अन्य सह-हिस्सेदारों को शामिल किए बिना, अदालत ने संपत्ति को आरक्षित तय किए बिना सार्वजनिक रूप से नीलामी करने का आदेश दिया: अधिनियम की धारा 6 के तहत बोली लगाने की आवश्यकता है, धारा 2 के तहत आदेश को इस परिणाम के साथ नहीं देखा जा सकता है कि यह नागरिक प्रक्रिया संहिता की धारा 2 के तहत एक डिक्री के बराबर होगा क्योंकि इसका मतलब यह नहीं होगा औपचारिक निर्णय जो मुकदमे में विवाद के सभी या किसी भी मामले के संबंध में पार्टियों के अधिकारों को निर्णायक रूप से निर्धारित करता है और प्रारंभिक या अंतिम हो सकता है। न्यायालय का आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 2 के अनुसार डिक्री के मानकों के अनुरूप होने में विफल रहा है, इसे ऐसा आदेश नहीं माना जा सकता है जिसने सिविल कोर्ट की डिक्री का रंग ले लिया है और इसलिए यह अधिनियम की धारा 8 के तहत अपील योग्य नहीं है। हमारे देश के प्रक्रियात्मक कानून में अपील मूल कारण की सुनवाई की प्रकृति में है। यह तथ्य के मामले के साथ-साथ कानून के मामले पर भी आधारित है। यह माना जाता है कि अपील न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित आदेशों पर सुधार के न्यायालय के रूप में कार्य करता है। लेकिन जब किसी न्यायालय द्वारा क्षेत्राधिकार का दुरुपयोग किया जाता है, उसका उल्लंघन किया

जाता है या उसे रोक दिया जाता है और उसके विचार-विमर्श के परिणाम कानून के प्रावधान के तहत परिकल्पित आदेश के अनुरूप भी नहीं होते हैं, तो पुनरीक्षण न्यायालय के पास उस न्यायालय को वापस लाने की शक्ति होती है। क्षेत्राधिकार। ऐसी परिस्थितियों में अपीलीय उपाय की उपलब्धता पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में बाधा नहीं बन सकती है।

(पैरा 7,8,10 एवं 11)

श्री के.सी. गुप्ता, वरिष्ठ उप-न्यायाधीश, अंबाला, दिनांक 17 सितंबर 1981 के आदेश के संशोधन के लिए धारा 115 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत याचिका, जिसके तहत उन्होंने श्री ए.के. जैन को स्थानीय आयुक्त के रूप में नियुक्त किया और उन्हें नीलामी के व्यापक प्रचार के लिए आवेदनों के परामर्श से एक तारीख तय करने और 14 सितंबर, 1981 को या उससे पहले अपनी रिपोर्ट सौंपने को कहा।

-याचिकाकर्ता की ओर से जिनेंद्र कुमार शर्मा, अधिवक्ता और योगेश कुमार शर्मा, अधिवक्ता।

-एम. एस. जैन, अधिवक्ता, प्रतिवादियों की ओर से।

निर्णय

एम. एम. पुंछी, न्यायमूर्ति (मौखिक)-

(1) मुकदमे के जिन पक्षों में से यह पुनरीक्षण याचिका उठी है, उनकी नारायणगढ़, जिला अंबाला में संयुक्त संपत्ति थी। उनमें से वादी ने विभाजन के लिए एक मुकदमा दायर किया जिसमें उनके पक्ष में एक प्रारंभिक डिक्री दी गई जिससे उन्हें संपत्तियों के 1/3 हिस्से का अधिकार मिल गया। ट्रायल कोर्ट द्वारा उठाया गया अगला कदम संपत्तियों को सीमा और सीमा के अनुसार विभाजित करने के लिए एक स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति करना था। स्थानीय आयुक्त ने 14 सितंबर, 1981 को अपनी रिपोर्ट में ऐसा करने में असमर्थता व्यक्त की क्योंकि उन्होंने पाया कि चार में से तीन संपत्तियां व्यावहारिक रूप से जीर्ण-शीर्ण थीं और चौथी एक किरायेदार के कब्जे में एक दुकान थी। पार्टियों की संख्या कुल मिलाकर 22 (पांच वादी और 28 प्रतिवादी) होने को ध्यान में रखते हुए उन्होंने सुझाव दिया कि विभाजन तभी प्रभावी हो सकता है जब यह मूल्यांकन और खुली नीलामी के आधार पर किया जाए। उनका विचार था कि अन्यथा प्रत्येक संपत्ति से एक तिहाई हिस्सा निकालना असंभव था।

(2) स्थानीय आयुक्त (श्री ए.के. जैन, अधिवक्ता) की रिपोर्ट 17 सितंबर 1981 को वादी पक्ष के अधिवक्ता श्री लाई चंद जैन की उपस्थिति में ट्रायल कोर्ट के समक्ष विचार के लिए आई। विद्वान न्यायाधीश ने रिपोर्ट की सामग्री को ध्यान में रखा। यद्यपि आदेश में इतने शब्दों में यह नहीं कहा गया है कि स्थानीय आयुक्त की रिपोर्ट को वैसे ही स्वीकार किया जा रहा था, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि उसे स्वीकार करते हुए, विद्वान न्यायाधीश ने उसी नीलामी का व्यापक प्रचार करने के लिए आवेदकों के साथ और 14 सितंबर, 1981 को या उससे पहले अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करें। यही वह आदेश है जो इस न्यायालय में चुनौती का विषय है।

(3) कुछ अतिरिक्त तथ्य जो तलब की गई फ़ाइल से उभर कर सामने आए हैं, वे हैं कि इसके अनुसरण में संपत्तियां बेची गईं और 1,72,000 रुपये की कीमत प्राप्त हुई। नीलामी वर्तमान याचिकाकर्ताओं के इस न्यायालय में संपर्क करने से पहले ही हो चुकी थी। यह एक ऐसा कारक है जिसका उपयोग याचिकाकर्ताओं के खिलाफ करने की कोशिश की जा रही है जो उनकी असहिष्णुता और प्रामाणिकता की कमी को दर्शाता है।

(4) इस याचिका के पक्ष में एक प्रारंभिक आपत्ति भी इस आधार पर ली गई है कि आक्षेपित आदेश विभाजन अधिनियम, 1893 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 2 के तहत पारित किया गया था और वही एक आदेश था जो इसने सिविल कोर्ट की डिक्री का रंग ले लिया और इसलिए सैसी अधिनियम की धारा 8 के तहत अपील की जा सकती है। यदि आपत्ति बरकरार रखी जानी है, तो निश्चित रूप से इस याचिका को इस न्यायालय में अपील में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है, अपील जिला न्यायाधीश के समक्ष होगी क्योंकि अधिकार क्षेत्र केवल उन्हीं के पास था।

(5) याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील श्री जिनेंद्र कुमार शर्मा ने याचिका की विचारणीयता पर आपत्ति को यह कहते हुए पूरा किया है कि एक आदेश जो पूरी तरह से अधिनियम की धारा 2 के दायरे में आता है, उसकी धारा 8 के तहत अपील योग्य है और और कोई नहीं। उनके अनुसार किसी आदेश को अधिनियम की धारा 2 के तहत एक माना जाने से पहले तीन आवश्यक शर्तें पूरी की जानी आवश्यक हैं, जैसे कि (1) इसे मुकदमे के एक पक्ष के अनुरोध पर किया जाना चाहिए, (2) न्यायालय को इस निष्कर्ष पर पहुंचना होगा कि संपत्ति की नीलामी के अलावा कोई रास्ता नहीं है और (3) न्यायालय को अधिनियम की धारा 6 के तहत इस उद्देश्य के लिए

आरक्षित मूल्य तय करना होगा। वह फ़ाइल पर दी गई दलीलों से अपने तर्क का समर्थन करते हुए कहते हैं कि किसी भी पक्ष द्वारा ऐसा कोई अनुरोध नहीं किया गया था, न ही इसे किसी दस्तावेज़ से दर्शाया जा सकता है, और फ़ाइल पर या यहां तक कि किसी भी पक्ष के किसी भी बयान से इसका कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। दूसरी ओर, प्रतिस्पर्धी उत्तरदाताओं के विद्वान वकील श्री एम.एस. जैन का तर्क है कि ऐसा अनुरोध मौखिक रूप से भी किया जा सकता है, बशर्ते न्यायालय को पता हो कि अनुरोध किया गया है और मौजूदा मामले में उनका तर्क है कि अनुरोध वादी द्वारा मौखिक रूप से किया गया था क्योंकि यह अब लागू आदेश से अनुमानित साक्ष्य है।

(6) पार्टियों के संबंधित तर्कों को आपस में जोड़ते हुए अधिनियम की धारा 2 और 3 के प्रावधानों की जांच करना आवश्यक होगा जिन्हें यहां पुन: प्रस्तुत किया जा सकता है: -

"2. विभाजन के मुकदमे में विभाजन के स्थान पर विक्रय का आदेश देने की न्यायालय को शक्ति। जब भी विभाजन के लिए किसी मुकदमे में, यदि इस अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले संस्थित किया गया हो, तो विभाजन की डिक्री की जा सकती थी, न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि, उस संपत्ति की प्रकृति के कारण, जिससे मुकदमा संबंधित है, या उसके शेयरधारकों की संख्या, या किसी अन्य विशेष परिस्थिति में, संपत्ति का विभाजन उचित या सुविधाजनक रूप से नहीं किया जा सकता है, और संपत्ति की बिक्री और आय का वितरण सभी शेयरधारकों के लिए अधिक फायदेमंद होगा, न्यायालय, यदि उचित समझे, व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से एक अंश या उससे अधिक की सीमा तक रुचि रखने वाले ऐसे शेयरधारकों में से किसी के अनुरोध पर, संपत्ति की बिक्री और आय के वितरण का निर्देश दे सकता है।

“3. प्रक्रिया जब हिस्सेदार खरीदने का वचन देता है-

1. यदि, किसी भी मामले में, जिसमें अंतिम पूर्वगामी धारा के तहत न्यायालय से बिक्री का निर्देश देने का अनुरोध किया जाता है, कोई अन्य शेयरधारक बिक्री की मांग करने वाली पार्टी या पार्टियों के शेयर या शेयरों को मूल्यांकन पर खरीदने की अनुमति के लिए आवेदन करता है, तो न्यायालय शेयर या शेयरों के मूल्यांकन का आदेश उस तरीके से देगा जो वह उचित समझे और ऐसे शेयरधारक को निर्धारित कीमत पर बेचने की पेशकश करेगा, और उस संबंध में सभी आवश्यक और उचित निर्देश दे सकता है।

2. यदि दो या दो से अधिक शेयरधारक अलग-अलग उप-धारा (1) में दिए गए अनुसार खरीदने की अनुमति के लिए आवेदन करते हैं, तो न्यायालय उस शेयरधारक को शेयर या शेयरों की बिक्री का आदेश देगा जो उसके द्वारा किए गए मूल्यांकन के ऊपर उच्चतम कीमत का भुगतान करने की पेशकश करता है।

3. यदि ऐसा कोई भी शेयरधारक इस तरह से निर्धारित कीमत पर ऐसे शेयर या शेयर खरीदने को तैयार नहीं है, तो आवेदक या आवेदक आवेदन या आवेदन की सभी लागतों या घटना का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होंगे।

(7) अधिनियम की धारा 2 और 3, जैसा कि वे मुझे लगती हैं, स्याम देश की-जुड़वाँ और अटूट रूप से जुड़ी हुई हैं। धारा 2 के तहत प्रस्तुत अनुरोध व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से एक अंश या उससे अधिक की सीमा तक रुचि रखने वाले एक या अधिक शेयरधारकों द्वारा भी हो सकता है। ऐसा नहीं है कि जब अनुरोध किया जाता है तो न्यायालय उसे स्वीकार कर सकता है। यह केवल धारा 3 का उपयोग करके ही ऐसा कर सकता है जो इसकी शक्तियों पर प्रतिबंध लगाता है और

अन्य शेयरधारकों के लिए उम्मीदें बढ़ाता है। इस प्रकार धारा 2 के तहत एक अनुरोध, अन्य शेयरधारकों को यह अधिकार देना चाहिए कि वे बिक्री की मांग करने वाली पार्टी या पार्टियों के शेयर या शेयरों को मूल्यांकन पर खरीदने के लिए आवेदन कर सकें। तब न्यायालय को अनिवार्य रूप से शेयर या शेयरों के मूल्यांकन का आदेश उस तरीके से देना होगा जो वह उचित समझे और ऐसे शेयरधारकों को निर्धारित कीमत पर बेचने की पेशकश करे, और इस संबंध में सभी आवश्यक और उचित निर्देश दे सकता है।

(8) जैसा कि उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने आपत्ति जताई, कि चूंकि अधिनियम की धारा 2, 3 और 4 के तहत आदेश धारा 8 के तहत अपील योग्य हैं, इसलिए धारा 2 और 3 या उनके अंतर्संबंध के बीच कोई संबंध नहीं है। इसका उत्तर बद्री नारायण प्रसाद चौधरी एवं अन्य बनाम नील रतन सरकार में मिलता है। सुप्रीम कोर्ट ने अधिनियम की धारा 2 और 3 की संयुक्त रूप से व्याख्या करते समय धारा 2 में आने वाले 'हो सकता है' शब्द को ध्यान में रखा और देखा कि भले ही धारा में परिकल्पित शर्तें मौजूद हों, न्यायालय के पास संपत्ति की बिक्री और आय के वितरण का निर्देश देने या न देने का विवेक है। इसका अभिप्राय यह था कि ये दोनों खंड आपस में जुड़े हुए थे।

(9) जैसा कि आक्षेपित आदेश की भाषा से स्पष्ट है, अकेले आवेदक सह-हिस्सेदार थे जिन्होंने शायद विद्वान न्यायाधीश से मौखिक अनुरोध किया था। धारा 3 की आवश्यकता के प्रयोजनों के लिए अन्य सहभागियों को शामिल किए बिना, विद्वान न्यायाधीश ने संपत्ति को सार्वजनिक रूप से नीलाम करने का आदेश दिया। आदेश के मुख्य भाग में यह कहीं नहीं है कि न्यायालय ने कभी भी अधिनियम की धारा 6 के तहत आरक्षित बोली तय की हो। ऐसा प्रतीत होता है कि उस

समय ऐसा कोई मंच उत्पन्न नहीं हुआ था क्योंकि केवल स्थानीय आयुक्त को ही नारायणगढ़ में ढोल बजाकर नीलामी का व्यापक प्रचार करना था। क्या ऐसी कोई आरक्षित बोली नीलामी होने से पहले तय की गई थी या नहीं, यह वर्तमान याचिका के निपटान की चिंता का विषय नहीं है।

(10) हमारे देश के प्रक्रियात्मक कानून में अपील मूल कारण की सुनवाई की प्रकृति में है। यह तथ्य के मामले के साथ-साथ कानून के मामले पर भी आधारित है। यह पहले से माना जाता है कि अपील की अदालत अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित आदेशों पर सुधार की अदालत के रूप में कार्य करती है। लेकिन जब किसी न्यायालय द्वारा अधिकार क्षेत्र का दुरुपयोग किया जाता है या उसका उल्लंघन किया जाता है या उसे रोक दिया जाता है और उसके विचार-विमर्श का परिणाम कानून के प्रावधान के तहत परिकल्पित आदेश के एक अंश के अनुरूप भी नहीं होता है। तब पुनरीक्षण न्यायालय के पास उस न्यायालय को उसके अधिकार क्षेत्र में वापस लाने की शक्ति है। ऐसी परिस्थितियों में अपीलीय उपाय की उपलब्धता पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में बाधा नहीं बन सकती है। जैसा कि पहले देखा गया है, क्षेत्राधिकार न्यायालय द्वारा धारा 2 के तहत माना गया था और अधिनियम की धारा 3 के साथ जुड़ा हुआ नहीं था। यह एक बड़ी अनियमितता है, इसलिए रिकॉर्ड पर पेटेंट है।

(11) यह न केवल अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में एक भौतिक अनियमितता है, बल्कि अपने आदेश को बेतुका रंग देने के लिए इसे त्यागना है। ऐसी स्थिति में धारा 2 के तहत पारित आदेश को इस परिणाम के साथ नहीं देखा जा सकता है कि यह नागरिक प्रक्रिया संहिता की धारा 2 के अर्थ में एक डिक्री के समान होगा क्योंकि इसका मतलब औपचारिक निर्णय नहीं होगा जो निर्णायक रूप से अधिकारों को निर्धारित करता है। मुकदमे में विवाद के सभी या किसी मामले के संबंध में

पक्ष और प्रारंभिक या अंतिम हो सकते हैं। आक्षेपित आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 2 के अनुसार डिक्री के मानकों के अनुरूप होने में विफल रहा है। इस प्रकार उत्तरदाताओं द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति खारिज कर दी गई है और एक बार ऐसा हो जाने पर स्वचालित परिणाम यह होता है कि विवादित आदेश को रद्द करना होगा, क्योंकि विवादित आदेश अधिनियम की धारा 2 और 3 के अनुरूप नहीं है।

(12) परिणामस्वरूप, यह याचिका सफल होती है और विवादित आदेश को रद्द किया जाता है। ट्रायल कोर्ट अब कानून के मुताबिक आगे बढ़ेगा। कोई लागत नहीं।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अँग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

Checked By:

Karandeep

Trainee Judicial Officer

Chandigarh Judicial Academy,

Chandigarh